अथ कार्तिकशुक्लैकादशीव्रतकथा प्रारभ्यते

ब्रह्मा बोले हे मुनिश्रेष्ठ ! पाप को नाश करने वाला, पुण्य को बढ़ाने वाला तथा सुबुद्धिमानों को मुक्ति देनेवाला एकादशी माहात्म्य को सुनो ॥ १ ॥ हे विप्रेन्द्र पृथ्वी पर गङ्गा की प्रभुता तभी तक है जब तक पाप को भस्म करनेवाली कार्तिक में हरिबोधिनी

ब्रह्मोवाच ॥ प्रबोधिन्याश्च माहात्म्यं पापघ्नं पुण्यवर्धनम् ॥ मुक्तिप्रदं सुबुद्धीनां शृणुष्व मुनिसत्तम ॥ १ ॥ तावद्गर्जन्ति विप्रेन्द्र गङ्गा भागीरथी क्षितौ ॥ यावन्नायाति पापघ्नी कार्तिके हरिबोधिनी ॥ २ ॥ तावद्गर्जन्ति तीर्थानि ह्यासमुद्रं सरांसि च ॥ यावत्प्रबोधिनी विष्णोस्तिथिर्नायाति कार्तिकी ॥ ३ ॥ अश्वमेधसहस्राणि राजसूयशतानि च ॥ एकेनैवोपवासेन प्रबोधिन्यां

नहीं आती है ॥ २ ॥ और समुद्र तीर्थ तथा सरोवर का प्रभाव भी तभी तक रहता है जब तक की विष्णुप्रबोधिनी तिथि नहीं आती है ॥ ३ ॥ एक सहस्र अश्वमेध और सौ राजसूय यज्ञ करने से जो फल प्राप्त होता है वह फल एक प्रबोधिनी के व्रत से मनुष्य

को मिलता है ॥ ४ ॥ नारद मुनि बोले कि हे पितामह ! एक बार भोजन, दिन के चतुर्थ प्रहर में भोजन और उपवास करने से क्या पुण्य होता है सो हमसे कहिए ॥ ५ ॥ ब्रह्मा बोले एक बार के भोजन से एक जन्म का पाप नाश होता है, नक्त भोजन (दिन के चतुर्थ प्रहर में भोजन) से दो जन्म के पापों का नाश और उपवास करने से सात जन्म के पापों का नाश होता है ॥ ६ ॥ हे पुत्र !

लभेन्नरः ॥ ४ ॥ नारद उवाच ॥ एकभुक्ते च किं पुण्यं किं पुण्यं नक्तभोजने ॥ उपवासेन किं पुण्यं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥ ५ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ एकभुक्तेन जन्मोत्थं नक्तेन द्विजनुर्भवम् ॥ सप्तजन्मभवं पापमुपवासेन नश्यति ॥ ६ ॥ यद्दुर्लभं यदप्राप्यं त्रैलोक्ये न तु गोचरम् ॥ यद्यप्यप्रार्थितं पुत्र ददाति हरिबोधिनी ॥ ७ ॥ मेरुमन्दरमात्राणि पापान्युग्राणि यानि तु ॥ एकेनैवोपवासेन दहते पापहारिणी ॥ ८ ॥ पूर्वजन्मसहस्रैस्तु यद्दुष्कर्म उपार्जितम् ॥ जागरेण प्रबोधिन्यां दहते तूलराशिवत् ॥ ९ ॥

जो तीनों लोकों में दृष्टिगोचर न होने वाला अप्रार्थित और न मिलने योग्य है उसको हरिबोधिनी देती है ॥ ७ ॥ मेरु मन्दराचल पर्वत के समान अत्यन्त उग्र पापों को पापहारिणी एकादशी व्रत करने से भस्म कर देती है ॥ ८ ॥ सहस्रों पूर्वजन्म के किये हुये पापों को रात्रि में जागरण करने से रुई के ढेर के समान प्रबोधिनी भस्म कर देती है ॥ ९ ॥ हे मुनिशार्दूल ! जो स्वभाव से विधिवत्

प्रवोधिनी का व्रत करते हैं उनको जैसा फल कहा है सो मिलता है ॥ १० ॥ हे मुनिवर ! जैसे कहा गया है उस प्रकार जो मनुष्य थोड़ा भी सुकृत करते हैं उनको मेरु के समान फल होता है ॥ ११ ॥ हे नारद ! जो विधिरहित मेरु के समान सुकृत करते हैं उनको धर्म का फल अणुमात्र-भी नहीं प्राप्त होता है ॥ १२ ॥ सन्ध्या न करने वाले, नास्तिक, वेदनिन्दक, धर्मशास्त्र को दूषित करने

उपवासं प्रबोधिन्यां यः करोति स्वभावतः ॥ विधिवन्मुनिशार्दूल यथोक्तं लभते फलम् ॥ १० ॥ यथोक्तं सुकृतं यस्तु विधिवत् कुरुते नरः ॥ स्वल्पं मुनिवरश्रेष्ठ मेरुतुल्यं भवेच्च तत् ॥ ११ ॥ विधिहीनं तु यः कुर्यात्सुकृतं मेरुमात्रकम् ॥ अणुमात्रं न चाप्नोति फलं धर्मस्य नारद ॥ १२ ॥ सन्ध्याहीने व्रतभ्रष्टे नास्तिके वेदनिन्दके ॥ नैतेषां तिष्ठते देहे धर्मशास्त्रविदूषके ॥ १३ ॥ परदाररते मूर्खे कृतघ्ने बन्धके तथा ॥ धर्मो न तिष्ठते देहे एतेषामपि देहिनाम् ॥ १४ ॥ ब्राह्मणो वापि शूद्रो वा सेवते परयोषितम् ॥ ब्राह्मणीं च विशेषेण चाण्डालसदृशावुभौ ॥ १५ ॥ सभर्तृकां वा विधवां ब्राह्मणो

वाले ॥ १३ ॥ दूसरे की स्त्री से भोग करने वाले, मूर्ख, पापकर्म करनेवाले तथा धोखा देने वाले इन सब के शरीर में धर्म नहीं रहता है ॥ १४ ॥ ब्राह्मण अथवा शूद्र दूसरे की स्त्री से विशेष करके ब्राह्मणी से भोग करने वाले दोनों चाण्डाल के समान हैं ॥ १५ ॥ हे

मुनिशार्दूल ! जो ब्राह्मण विधवा अथवा सधवा ब्राह्मणी से भोग करता है उसका वंशसहित नाश हो जाता है ॥ १६ ॥ जो अधम ब्राह्मण दूसरे की स्त्री से रमण करता है उसको सन्तान नहीं होता है और उसके पूर्व जन्म के सञ्चित पुण्य नष्ट हो जाते हैं ॥ १७ ॥ गुरु ब्राह्मणों से जो अहङ्कार से बर्ताव करते हैं उनका सुकृत अर्थात् पुण्य शीघ्र नाश हो जाता है और उन्हें धन तथा सन्तान नहीं मिलती

ब्राह्मणीं यदि ॥ सेवते मुनिशार्दूल सान्वयो याति संक्षयम् ॥ १६ ॥ परदाराभिगमनं कुरुते यो द्विजाधमः ॥ सन्ततिर्न भवेत्तस्य फलं जन्मार्जितं न हि ॥ १७ ॥ गुरुणा सह विप्रैश्च योऽहङ्कारेण वर्तते ॥ सुकृतं नश्यते शीघ्रं धनं नाप्नोति सन्ततिम् ॥ १८ ॥ आचारभ्रष्टदेहानां वृषलीगामिनां तथा ॥ दुर्जनं सेवमानानां धर्मस्तेषां पराङ्मुखः ॥ १९ ॥ पतितैः सह सङ्गं च तद्गृहे गमनं तथा ॥ ये कुर्वन्ति नृपश्रेष्ठ ते गच्छन्ति यमालये ॥ २० ॥ धर्मो नष्टो नृणां येषां स्वागतासनभोजनैः ॥ तेषां

है ॥ १८ ॥ भ्रष्ट आचार करने वाला, चाण्डालों से गमन करनेवाला, दुष्ट मनुष्य की सेवा करने वाले का धर्म नष्ट हो जाता है। अर्थात् इन कर्मों को पापी मनुष्य करते हैं ॥ १९ ॥ हे राजन् ! जो इन कर्मों को करते हैं और पतितों का सङ्ग करते हैं तथा पतितों के गृह में जाते हैं वे यमलोक को जाते हैं ॥ २० ॥ हे वत्स ! स्वागत, आसन तथा भोजन से जिन मनुष्यों के धर्म का नाश हो जाता है उनकी

कीर्ति आयु और सन्तान का नाश हो जाता है ॥ २१ ॥ जो अधम मनुष्य साधुओं का अपमान करते हैं वे धर्म, अर्थ तथा कामनाओं से रहित होकर नरक की अग्नि में भस्म किये जाते हैं ॥ २२ ॥ जो अधम साधुओं का अपमान कर आनन्दित होते हैं और जो उनको साधु का अपमान करने से नहीं रोकते हैं वे मूढ़ अपने कुल का नाश देखते हैं ॥ २३ ॥ शठता, पिशुनता और भ्रष्टाचार करने वाले

वै नश्यते वत्स कीर्तिरायुः प्रजाः सुखम् ॥ २१ ॥ साधुनामपमानं तु ये कुर्वन्ति नराधमाः ॥ त्रिवर्गफलहीनास्ते दह्यन्ते नरकाग्निना ॥ २२ ॥ कृत्वाऽवमानं साधूनां ये हृष्यन्ति नराधमाः ॥ वारयन्ति न ये मूढास्ते पश्यन्ति कुलक्षयम् ॥ २३ ॥ आचारभ्रष्टदेहस्य पिशुनस्य शठस्य च ॥ ददतो जुह्वतो वापि गतिस्तस्य न विद्यते ॥ २४ ॥ तस्मान्न त्वाचरेत्किञ्चिदशुभं लोकगर्हितम् ॥ सदाचारवता भाव्यं यथा धर्मो न नश्यति ॥ २५ ॥ ये ध्यायन्ति मनोवृत्त्या करिष्यामः प्रबोधिनीम् ॥ तेषां विलीयते पापं पूर्वजन्मशतोद्भवम् ॥ २६ ॥ समतीतं भविष्यं च वर्तमानं कुलायुतम् ॥ विष्णु-

मनुष्य की गति दान देने और यज्ञ करने से भी नहीं होती है ॥ २४ ॥ इस कारण कुछ भी अशुभ कर्म जो कि संसार में ग्रहण करने योग्य नहीं हैं उनको न करै और सदाचार अर्थात् उत्तम कर्म करे, जिससे धर्म का नाश न हो ॥ २५ ॥ जो अपने मन से विचार करता है कि मैं प्रबोधिनी का व्रत करूँगा उसके सौ जन्म के किये हुए पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ २६ ॥ जो प्रबोधिनी एकादशी

की रात्रि में जागरण करते हैं वह बीते भये, वर्तमान और होने वाले दश हजार कुल को विष्णु के लोक में पहुंचा देते हैं ॥ २७ ॥
और उनके पितर पूर्वजन्म के किये हुए पाप से नरक के दुःख से छूट कर प्रसन्न और अलङ्कृत होकर विष्णु के लोक में निवास
करते हैं ॥ २८ ॥ हे मुने ! ब्रह्महत्या आदि घोर पाप करने वाले मनुष्य भी प्रबोधिनी को जागरण करने से सब

लोकं नयत्याशु प्रबोधिन्यां तु जागरे ॥ २७ ॥ वसन्ति पितरो हृष्टा विष्णुलोकेऽप्यलंकृताः ॥ वि-
मुक्ता नारकैर्दुःखैः पूर्वकर्मसमुद्भवैः ॥ २८ ॥ कृत्वा तु पातकं घोरं ब्रह्महत्यादिकं नरः ॥ कृत्वा
तु जागरं विष्णोर्धौतपापो भवेन्मुने ॥ २९ ॥ दुष्प्राप्यं यत्फलं रम्यैरश्वमेधादिभिर्मखैः ॥ प्राप्यते तत्सु-
खेनैव प्रबोधिन्यां तु जागरे ॥ ३० ॥ आप्लुत्य सर्वतीर्थेषु दत्त्वा गाः काञ्चनं महीम् ॥ न तत्फलम-
वाप्नोति यत्कृत्वा जागरं हरेः ॥ ३१ ॥ जातः स एकः सुकृती कुलं तेनैव पावितम् ॥ कार्तिके

पापों से छूट जाते हैं ॥ २९ ॥ जो सुन्दर फल अश्वमेध आदि यज्ञ करने से नहीं प्राप्त होता है वह फल प्रबोधिनी में जागरण करने से
सरलता पूर्वक प्राप्त होता है ॥ ३० ॥ जो फल समस्त तीर्थों में स्नान करने तथा गौ, सुवर्ण और भूमिदान करने से नहीं प्राप्त होता है
वह फल एकादशी के दिन जागरण करने से प्राप्त होता है ॥ ३१ ॥ हे मुनिशार्दूल ! वही सुकृत करने वाला और कुटुम्ब का उद्धार करने

वाला उत्पन्न हुआ जो कार्तिक में प्रबोधिनी एकादशी का व्रत करता है वह पुण्यात्मा है ।। ३२ ।। हे मुनिवर ! जिस प्रकार मृत्यु अवश्य होती है उसी प्रकार धन भी अवश्य नष्ट होता है यह जानकर विष्णुवासर अर्थात् एकादशी का व्रत करना चाहिये ।। ३३ ।। जो प्रबोधिनी एकादशी का व्रत करता है उसके गृह में तीनों लोक में जितने तीर्थ हैं वे सब निवास करते हैं ।। ३४ ।। सम्पूर्ण कर्मों का

मुनिशार्दूल कृता येन प्रबोधिनी ।। ३२ ।। यथा ध्रुवं नृणां मृत्युर्धननाशस्तथा ध्रुवम् ।। इति ज्ञात्वा मुनिश्रेष्ठ कर्तव्यं वैष्णवं दिनम् ।। ३३ ।। यानि कानि च तीर्थानि त्रैलोक्ये सम्भवन्ति च ।। तानि तस्य गृहे सम्यग्यः करोति प्रबोधिनीम् ।। ३४ ।। सर्वं कृत्यं परित्यज्य तुष्ट्यर्थं चक्रपाणिनः ।। उपोष्यैकादशी रम्या कार्तिके हरिबोधिनी ।। ३५ ।। स ज्ञानी स च योगी च स तपस्वी जितेन्द्रियः ।। भोगे भोगश्च तस्यास्ति ह्युपास्ते हरिबोधिनीम् ।।३६।। विष्णुप्रियतरा ह्येषा धर्मसारस्य दायिनी ।। सकृदेनामुपोष्यैव मुक्तिभाक्च भवेन्नरः ।। ३७ ।। प्रबोधिनीमुपोषित्वा न गर्भे विशते नरः ।। सर्वधर्मान्

परित्याग कर चक्रपाणि विष्णु भगवान् को सन्तुष्ट करने के निमित्त कार्तिक में सुन्दर हरिबोधिनी का व्रत करना चाहिये ।। ३५ ।। वही ज्ञानी, योगी, तपस्वी और जितेन्द्रिय है तथा उसीको भोग और मोक्ष प्राप्त होता है जो हरिबोधिनी की उपासना करता है ।। ३६ ।। यह विष्णु की प्यारी एकादशी धर्म के तत्त्व को देनेवाली है, एकादशी का एक बार व्रत करने से मनुष्य मुक्ति के भागी हो जाते हैं ।।३७।।

हे नारद ! प्रबोधिनी का व्रत करने से मनुष्य को गर्भ में प्रवेश करना नहीं होता है इस कारण सब धर्मों को छोड़ कर इसका व्रत करना चाहिये ॥ ३८ ॥ कर्म, मन और वाणी से किये पापों को प्रबोधिनी के जागरण से गोविन्द भगवान् नाश कर देते हैं ॥ ३९ ॥ हे वत्स ! प्रबोधिनी के दिवस विष्णु भगवान् के नाम से मनुष्य स्नान, दान, तप तथा होम आदि जो कुछ करता है वह

परित्यज्य तस्मात् कुर्वीत नारद ॥ ३८ ॥ कर्मणा मनसा वाचा पापं यत्समुपार्जितम् ॥ तत्क्षालयति गोविन्दः प्रबोधिन्यां तु जागरे ॥ ३९ ॥ स्नानं दानं जपो होमः समुद्दिश्य जनार्दनम् ॥ नरैर्यत्क्रियते वत्स प्रबोधिन्यां तदक्षयम् ॥ ४० ॥ येऽर्चयन्ति नरास्तस्यां भक्त्या देवं च माधवम् ॥ समुपोष्य प्रमुच्यन्ते पापैस्ते शतजन्मनि ॥ ४१ ॥ महाव्रतमिदं पुत्र महापापौघनाशनम् ॥ प्रबोधवासरे विष्णोर्विधिवत्समुपोषयेत ॥ ४२ ॥ व्रतेनानेन देवेशं परितोष्य जनार्दनम् ॥ विराजयन् दिशः सर्वाः प्रयाति

अक्षय होता है ॥ ४० ॥ जो मनुष्य एकादशी का व्रत और भक्तिपूर्वक माधव भगवान् की पूजा करते हैं वे सौ जन्म के किये हुए पापों से छूट जाते हैं ॥ ४१ ॥ हे पुत्र ! प्रबोधिनी एकादशी के दिवस विधि पूर्वक विष्णु की उपासना अर्थात् पूजन करने से यह महाव्रत बड़े बड़े पापों को नाश कर देता है ॥ ४२ ॥ इस व्रत को करने से देवताओं के ईश जनार्दन सन्तुष्ट होते हैं और व्रत करने

वाले दशों दिशाओं को प्रकाशित करते हुए विष्णुलोक को जाते हैं ॥ ४३ ॥ हे द्विपदों में श्रेष्ठ अर्थात् नारद ! कान्ति और सुख चाहने वाले मनुष्य को कार्तिक में द्वादशी युक्त प्रबोधिनी एकादशी का व्रत प्रयत्न से करना चाहिए ॥ ४४ ॥ हे वत्स ! बाल्यावस्था और वृद्धावस्था के किये हुए अल्प अथवा बहुत से सौ जन्म के सञ्चित पापों को ॥ ४५ ॥ हे मुनिवर नारद ! सूखा, आर्द्र अर्थात् गीला

भवनं हरेः ॥ ४३ ॥ कर्तव्यैषा प्रयत्नेन नरैः कान्तिमभीप्सुभिः ॥ द्वादशी द्विपदां श्रेष्ठ कार्तिके तु प्रबोधिनी ॥ ४४ ॥ बाल्ये यच्चार्जितं वत्स यौवने वार्धके तथा ॥ शतजन्मकृतं पापं स्वल्पं वा यदि वा बहु ॥ ४५ ॥ शुष्कमार्द्रं मुनिश्रेष्ठ स्वगुह्यमपि नारद ॥ तत्क्षालयति गोविन्दमस्यामभ्यर्च्य भक्तितः ॥ ४६ ॥ धनधान्यवहा पुण्या सर्वपापहरा परा ॥ तामुपोष्य हरेर्भक्त्या दुर्लभं न भवे-त्क्वचित् ॥ ४७ ॥ चन्द्रसूर्योपरागे च यत्फलं परिकीर्तितम् ॥ तत्सहस्रगुणं प्रोक्तं प्रबोधिन्यां तु

जो छिपे हुए तथा जो प्रकट हों उन सबों को इस एकादशी के दिवस भक्तिपूर्वक गोविन्द भगवान् की पूजा करने से धो दिया जाता है अर्थात् सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ ४६ ॥ यह उत्तम एकादशी अन्न, धन तथा पुण्य को देनेवाली और सब पापों को हरने वाली है, भक्तिपूर्वक इस व्रत को करने से कुछ दुर्लभ नहीं है ॥ ४७ ॥ सूर्य चन्द्रमा के ग्रहण में पुण्य करने से जो फल प्राप्त होता है सो फल

प्रबोधिनी में जागरण करने से मिलता है ॥ ४८ ॥ जो फल स्नान, दान, जप, होम और स्वाध्याय करने से प्राप्त होता है उन सब से करोड़ गुना फल प्रबोधिनी को विष्णु भगवान् की पूजा करने से होता है ॥ ४९ ॥ मनुष्य के किये हुए समस्त पुण्य कार्तिक की प्रबोधिनी का व्रत किये विना व्यर्थ हो जाते हैं ॥ ५० ॥ हे नारद ! जो मनुष्य कार्तिक में विष्णु का नियम अर्थात् एकादशी की

जागरात् ॥ ४८ ॥ स्नानं दानं जपो होमः स्वाध्यायोऽभ्यर्चनं हरेः ॥ तत्सर्वं कोटितुल्यं तु प्रबोधिन्यां तु यत्कृतम् ॥ ४९ ॥ जन्मप्रभृति यत्पुण्यं नरेणाभ्यर्जितं भवेत् ॥ वृथा भवति तत्सर्वमकृत्वा कार्तिकव्रतम् ॥ ५० ॥ अकृत्वा नियमं विष्णोः कार्तिके यः क्षिपेन्नरः ॥ जन्मार्जितस्य पुण्यस्य फलं नाप्नोति नारद ॥ ५१ ॥ तस्मात्त्वया प्रयत्नेन देवदेवो जनार्दनः ॥ उपासनीयो विप्रेन्द्र सर्वकामफलप्रदः ॥ ५२ ॥ परान्नं वर्जयेद्यस्तु कार्तिके विष्णुतत्परः ॥ परान्नवर्जनाद्वत्स चान्द्रायणफलं लभेत् ॥ ५३ ॥ न तथा तुष्यते यज्ञैर्न दानैर्वा गजादिभिः ॥ यथा शास्त्रकथालापैः कार्तिके मधु-

उपासना नहीं करते हैं उनको जीवन पर्यन्त के किये हुए पुण्य का फल प्राप्त नहीं होता है ॥ ५१ ॥ हे विप्रेन्द्र ! इस कारण तुमको सर्वदा यत्नपूर्वक देवताओं के देव जनार्दन भगवान् की उपासना करनी चाहिये ॥ ५२ ॥ हे पुत्र ! जो विष्णु के भक्त कार्तिक मास में दूसरे के अन्न को ग्रहण नहीं करते हैं उनको उस अन्न का त्याग करने से चान्द्रायण व्रत करने का फल मिलता है ॥ ५३ ॥ कार्तिक

में मधुसूदन भगवान् शास्त्र की कथा वार्ता से जितना प्रसन्न होते हैं उतना सन्तुष्ट यज्ञ करने और हाथी घोड़ा दान करने से नहीं होते हैं ॥ ५४ ॥ कार्तिक मास में विष्णु की कथा का आधा या चौथाई श्लोक जो मन लगा के कहता और सुनता है उसको एक सौ गोदान करने का फल प्राप्त होता है ॥ ५५ ॥ हे मुने ! समस्त धर्मकार्यों को छोड़ कर सर्वदा कार्तिक मास में मेरे सम्मुख बैठकर

सूदनः ॥ ५४ ॥ ये कुर्वन्ति कथां विष्णोर्ये शृण्वन्ति समाहिताः ॥ श्लोकार्धं श्लोकपादं वा कार्तिके गोशतं फलम् ॥ ५५ ॥ सर्वधर्मान् परित्यज्य ममाग्रे कार्तिके नरः ॥ शास्त्रावधारणं कार्यं श्रोतव्यं च सदा मुने ॥ ५६ ॥ श्रेयसा लोभबुद्ध्या वा यः करोति हरेः कथाम् ॥ कार्तिके मुनिशार्दूल कुलानां तारयेच्छतम् ॥ ५७ ॥ नित्यं शास्त्रविनोदेन कार्तिके यः क्षिपेन्नरः ॥ निर्दहेत्सर्वपापानि यज्ञायुतफलं लभेत ॥ ५८ ॥ नियमेन नरो यस्तु शृणुते वैष्णवीं कथाम् ॥ कार्तिके तु विशेषेण

शास्त्रों की कथा कहना और सुनना चाहिये ॥ ५६ ॥ हे मुनिशार्दूल ! जो कल्याण होने की इच्छा से कार्तिक में हरि कथा को कहते हैं वे अपने कुटुम्ब को क्षणमात्र में तार देते हैं ॥ ५७ ॥ जो मनुष्य कार्तिक मास में प्रतिदिन शास्त्रों के आनन्द में काल व्यतीत करते हैं उनको दश सहस्र यज्ञ करने का फल मिलता है और उनके सब पाप भस्म हो जाते हैं ॥ ५८ ॥ जो मनुष्य नियम को करके

विशेष कर कार्तिक मास में विष्णु की कथा को सुनते हैं वे एक हजार गोदान करने के फल को पाते हैं ॥ ५९ ॥ हे मुने ! विष्णु के प्रबोध के दिन जो विष्णु भगवान् की कथा को करते हैं वे सातों द्वीप वाली पृथ्वी को दान देने का फल पाते हैं ॥ ६० ॥ हे मुनिशार्दूल ! जो मनुष्य विष्णु की दिव्य कथा को सुनकर कथा कहने वाले को अर्थात् वक्ता को शक्ति के अनुसार दक्षिणा देते हैं उनको

गोसहस्रफलं लभेत् ॥ ५९ ॥ प्रबोधवासरे विष्णोः कुरुते यो हरेः कथाम् ॥ सप्तद्वीपवतीदाने तत्फलं लभते मुने ॥ ६० ॥ श्रुत्वा विष्णुकथां दिव्यां येऽर्चयन्ति कथाविदम् ॥ स्वशक्त्या मुनिशार्दूल तेषां लोकाः सनातनाः ॥ ६१ ॥ ब्रह्मणो वचनं श्रुत्वा नारदः पुनरब्रवीत् ॥ विधानं ब्रूहि मे स्वामिन्नेकादश्याः सुरोत्तम ॥ ६२ ॥ नारद उवाच ॥ चीर्णेन येन भगवन्यादृशं फलमाप्नुयात ॥ नारदस्य वचः श्रुत्वा ब्रह्मा वचनमब्रवीत ॥ ६३ ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय ह्येकादश्यां द्विजोत्तम ॥ स्नानं चैव

सनातन लोक अर्थात् नाश न होने वाला लोक मिलता है ॥६१॥ ब्रह्मा की बात सुनकर नारद मुनि फिर पूछने लगे कि—हे स्वामिन् ! देवताओं में श्रेष्ठ एकादशी की विधि हमसे कहिये ॥ ६२ ॥ हे भगवन् ! जिसके करने से जैसा फल प्राप्त होता है । नारद मुनि की बात सुनकर ब्रह्मा जी कहने लगे कि ॥ ६३ ॥ हे द्विजोत्तम ! ब्राह्म मुहूर्त अर्थात् जब दो घड़ी रात्रि बाकी रहे तब उठ जाय

और दतुअन करके स्नान करे ॥ ६४ ॥ नदी, सरोवर, कूप अथवा गृह में अपनी इच्छानुसार स्नान करके फिर केशव भगवान् की पूजा कर के कथा सुने ॥ ६५ ॥ हे महाभाग ! पश्चात् नियम करने के निमित्त इस मन्त्र को पढ़े कि मैं एकादशी के दिन निराहार व्रत कर के दूसरे दिन अर्थात् द्वादशी को ॥६६॥ भोजन करूँगा । हे पुण्डरीकाक्ष ! हे अच्युत ! मैं आपकी शरण हूँ मेरी रक्षा कीजिए, इस मन्त्र

प्रकर्तव्यं दन्तधावनपूर्वकम् ॥ ६४ ॥ नद्यां तडागे कूपे वा वाप्यां गेहे तथैव च ॥ केशवश्चैव सम्पूज्यः कथायाः श्रवणं तथा ॥ ६५ ॥ नियमार्थे महाभाग इमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥ एकादश्यां निराहारः स्थित्वाऽहनि परे ह्यहम् ॥ ६६ ॥ भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥ अमुं मन्त्रं समुच्चार्य देवदेवस्य चक्रिणः ॥६७॥ भक्तिभावेन तुष्टात्मा ह्युपवासं समर्पयेत् ॥ रात्रौ जागरणं कार्यं देवदेवस्य सन्निधौ ॥ ॥ ६८ ॥ गीतं नृत्यं च वाद्यं च तथा कृष्णकथां मुने ॥ यः करोति स पुण्यात्मा त्रैलोक्योपरि संस्थितः ॥ ६९ ॥ बहुपुष्पैर्बहुफलैः कर्पूरागुरुकुंकुमैः ॥ हरेः पूजा विधातव्या

को देवताओं के देव चक्रपाणि भगवान् के सम्मुख पढ़े ॥६७॥ पश्चात् भक्ति भाव से प्रसन्नतापूर्वक व्रत करे और रात्रि में देवदेव के समीप जागरण करे ॥ ६८ ॥ हे मुने ! जो गीत गाते हैं अथवा नाचते हैं, बाजा बजाते हैं और कृष्ण की कथा कहते हैं और सुनते हैं, वे पुण्यात्मा तीनों लोक के ऊपर अर्थात् सत्यलोक में निवास करते हैं ॥६९॥ कार्तिक में प्रबोधिनी एकादशी को बहुत से पुष्प, फल, कर्पूर और कुंकुम आदि

से विष्णु भगवान् की पूजा करनी चाहिये ॥ ७० ॥ हे मुनीश्वर ! एकादशी के दिन धन का लोभ न करना चाहिये अर्थात् एकादशी के दिन लोभ को त्याग कर दान देने से असंख्य पुण्य की प्राप्ति होती है ॥ ७१ ॥ प्रबोधिनी एकादशी के जागरण में नाना प्रकार के उत्तमोत्तम फल से विष्णु की पूजा करना और शंख में जल रख कर अर्घ्य देना चाहिये ॥ ७२ ॥ सब तीर्थों में स्नान सब प्रकार दान

कार्तिक्यां बोधवासरे ॥ ७० ॥ वित्तशाठ्यं न कर्त्तव्यं सम्प्राप्ते हरिवासरे ॥ यस्मात् पुण्यमसंख्यातं प्राप्यते मुनिसत्तम ॥ ७१ ॥ फलैर्नानाविधैर्दिव्यैः प्रबोधिन्यां तु जागरे ॥ शंखे तोयं समादाय ह्यर्घो देयो जनार्दने ॥ ७२ ॥ यत्फलं सर्वतीर्थेषु सर्वदानेषु यत्फलम् ॥ तत्फलं कोटिगुणितं दत्त्वाऽर्घं बोधवासरे ॥ ७३ ॥ अगस्त्यकुसुमैर्दिव्यैः पूजयेद्यो जनार्दनम् ॥ देवेन्द्रोऽपि मुनिश्रेष्ठ करोति करसम्पुटम् ॥ ७४ ॥ न तत्करोति विप्रेन्द्र तपसा तोषितो हरिः ॥ यत्करोति हृषीकेशो मुनिपुष्पैरलङ्कृतः ॥ ७५ ॥ विल्वपत्रैश्च ये कृष्णं कार्तिके कलिवर्धन ॥ पूजयन्ति महाभक्त्या मुक्तिस्तेषां

देने से जो फल प्राप्त होता है उससे करोड़गुणा फल प्रबोधिनी एकादशी को हरि भगवान् को अर्घ्य देने से मिलता है ॥ ७३ ॥ हे मुनीश्वर ! उत्तम अगस्त्य के फूल से जो जनार्दन भगवान् की पूजा करता है उसको इन्द्र भी नमस्कार करते हैं ॥ ७४ ॥ हे विप्रेन्द्र ! तपस्या करके सन्तुष्ट करने से हरि भगवान् जो नहीं करते हैं सो अगस्त्य के फूल से अलंकृत अर्थात् शृङ्गार करने से करते हैं ॥ ७५ ॥

जो महाभक्त कार्तिक में बेल के पत्र से कृष्णजी की पूजा करते हैं उनको मेरी कही हुई मुक्ति प्राप्त होती है ॥ ७६ ॥ जो महाभक्त कार्तिक मास में तुलसी पत्र और फल से जनार्दन भगवान् का पूजन करते हैं वे दश हजार जन्म के समस्त पापों को भस्म कर देते हैं ॥ ७७ ॥ तुलसी का दर्शन करने से, गुणानुवाद अर्थात् कथा कहने से, नमस्कार करने से, स्तुति करने से, रोपण अर्थात् तुलसी का वृक्ष लगाने से और प्रतिदिन पूजन आदि सब प्रकार से तुलसी मङ्गल देनेवाली है ॥ ७८ ॥ तुलसी की इस नव प्रकार की भक्ति

मयोदिता ॥ ७६ ॥ तुलसीदलपुष्पैश्च पूजयन्ति जनार्दनम् ॥ कार्तिके सकलं वत्स पापं जन्मायुतं दहेत ॥ ७७ ॥ दृष्टा स्पृष्टाऽथवा ध्याता कीर्तिता नमिता स्तुता ॥ रोपिता सेचिता नित्यं पूजिता तुलसी शुभा ॥७८॥ नवधा तुलसीभक्तिं ये कुर्वन्ति दिने दिने ॥ युगकोटिसहस्राणि ते वसन्ति हरेर्गृहे ॥ ७९ ॥ रोपिता तुलसी यावत्कुरुते मूलविस्तरम् ॥ तावद्युगसहस्राणि तनोति सुकृतं मुने ॥ ८० ॥ यावच्छाखाप्रशाखाभिर्बीजपुष्पदलैर्मुने ॥ रोपिता तुलसी पुंभिर्वर्धते वसुधातले ॥ ८१ ॥

को जो प्रतिदिन करते हैं वे हजार करोड़ युग पर्यन्त विष्णुलोक में निवास करते हैं ॥ ७९ ॥ हे मुने ! रोपी हुई तुलसी जितने जड़ का विस्तार करती है उतनेही हजार युग पर्यन्त तुलसी रोपन करने वाले से सुकृत का विस्तार होता है ॥ ८० ॥ हे मुने ! जिस मनुष्य की रोपन की हुई तुलसी की जितनी शाखा, प्रशाखा, बीज और फल पृथ्वी में बढ़ते हैं ॥ ८१ ॥ उनके उतने ही कुल जो व्यतीय

हो गये हैं वर्तमान हैं तथा होंगे वे सहस्र कल्प पर्यन्त विष्णुलोक में निवास करते हैं ॥ ८२ ॥ कदम्ब के फूल से जो जनार्दन भगवान् का पूजन करते हैं वे चक्रपाणि भगवान् के प्रसाद से यमलोक को नहीं जाते हैं ॥ ८३ ॥ कदम्ब के फूल को देखकर केशव भगवान् प्रसन्न होते हैं, हे विप्र ! जब सब कामनाओं को देने वाले विष्णु भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं तब फिर क्या नहीं मिलता है,

कुले तेषां तु ये जाता ये भविष्यन्ति ये गताः ॥ आकल्पयुगसाहस्रं तेषां वासो हरेर्गृहे ॥ ८२ ॥ कदम्बकुसुमैर्देवं येऽर्चयन्ति जनार्दनम् ॥ तेषां यमालयो नैव प्रसादाच्चक्रपाणिनः ॥ ८३ ॥ दृष्ट्वा कदम्बकुसुमं प्रीतो भवति केशवः ॥ किं पुनः पूजितो विप्र सर्वकामप्रदो हरिः ॥ ८४ ॥ यः पुनः पाटलीपुष्पैः कार्तिके गरुडध्वजम् ॥ अर्चयेत्परया भक्त्या मुक्तिभागी भवेद्धि सः ॥ ८५ ॥ बकुलाशोककुसुमैर्येऽर्चयन्ति जगत्पतिम् ॥ विशोकास्ते भविष्यन्ति यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥८६॥ येऽर्चयन्ति

अर्थात् मनुष्य को संसार में सब वस्तु प्राप्य हैं ॥ ८४ ॥ और कार्तिक मास में पकड़ी के फूल से भक्ति भाव सहित जो गरुड़ध्वज भगवान् की पूजा करता है वह मुक्ति का भागी होता है ॥ ८५ ॥ बकुल और अशोक के फूल से जो विष्णु भगवान् की पूजा करता है वह तब तक विशोक रहता है जब तक सूर्य चन्द्रमा रहेंगे, अर्थात् कल्प के अन्त तक उसको कोई दुःख नहीं होता ॥ ८६ ॥

विप्र ! जो कनेर के लाल अथवा सफेद फूल से जगत्पति विष्णु भगवान् की पूजा करता है उसके ऊपर चारों युगों में केशव भगवान् कृपा करते हैं ।।८७।। जो मनुष्य केशव भववान् के ऊपर आम का फल और बौर चढ़ाते हैं वे भारयवान् करोड़ गोदान के फल के भागी होते हैं ।। ८८ ।। जो मनुष्य दूब के अंकुर से विष्णु भगवान् की पूजा करते हैं वे सौ गुणा पूजा के फल को प्राप्त होते हैं ।। ८९ ।।

जगन्नाथं करवीरैः सितासितैः ।। चतुर्युगानि विप्रेन्द्र प्रीतो भवति केशवः ।। ८७ ।। मञ्जरीं सहकारस्य केशवोपरि ये नराः ।। यच्छन्ति ते महाभागा गोकोटिफलभागिनः ।।८८।। दूर्वाङ्कुरैर्हरेर्यस्तु पूजां काले प्रयच्छति ।। पूजाफलं शतगुणं सम्यगाप्नोति मानवः ।। ८९ ।। शमीपत्रैस्तु ये देवं पूजयन्ति सुखप्रदम् ।। यममार्गो महाघोरो निस्तीर्णस्तैस्तु नारद ।। ९० ।। वर्षाकाले तु देवेशं कुसुमैश्चम्पकोद्भवैः ।। येऽर्चयन्ति न ते मर्त्याः संसरेयुः पुनर्भवे ।। ९१ ।। कुम्भीपुष्पं तु विप्रर्षे ये यच्छन्ति

२३ हे नारद ! शमी के पत्र से सुख देने वाले भगवान् की पूजा करने वाले मनुष्य का महाघोर यमराज के मार्ग से निस्तार हो जाता है ।। ९० ।। वर्षा ऋतु में जो मनुष्य चम्पा के फूल से देवताओं के देव विष्णु भगवान् की पूजा करते हैं वे मनुष्य संसार में फिर जन्म नहीं लेते हैं ।। ९१ ।। हे मुने ! जो पकड़ी का फूल जनार्दन भगवान् पर चढ़ाते हैं उनको एक पल सुवर्ण चढ़ाने का पुण्य

मिलता है ॥ ९२ ॥ जो पीतवर्ण केतकी का फूल जनार्दन भगवान् पर चढ़ाते हैं उनके करोड़ों जन्म के सञ्चित पापों को गरुडध्वज भगवान् भस्म कर देते हैं ॥ ९३ ॥ जो कुंकुम के समान अरुण वर्ण की शतपत्रिका और गन्ध जगन्नाथ को चढ़ाते हैं वे श्वेतद्वीप में निवास करते हैं ॥ ९४ ॥ हे ब्रह्मन् ! इस प्रकार से रात्रि में मुक्ति देने वाले केशव भगवान् की पूजा करे और प्रातःकाल होने पर उठ

जनार्दने ॥ सुवर्णपलमात्रं ते लभन्ते वै फलं मुने ॥ ९२ ॥ सुवर्णकेतकीपुष्पं यो ददाति जना-
र्दने ॥ कोटिजन्मार्जितं पापं दहते गरुडध्वजः ॥ ९३ ॥ कुङ्कुमारुणवर्णाञ्च गन्धाढ्यां शतपत्रिकाम् ॥
यो ददाति जगन्नाथे श्वेतद्वीपालये वसेत् ॥ ९४ ॥ एवं सम्पूज्य रात्रौ च केशवं मुक्तिभुक्तिदम् ॥
प्रातरुत्थाय च ब्रह्मन् गत्वा तु सजलां नदीम् ॥ ९५ ॥ तत्र स्नात्वा जपित्वा च कृत्वा पौर्वाह्णिकीः
क्रियाः ॥ गृहे गत्वा च सम्पूज्य केशवं विधिवन्नरः ॥ ९६ ॥ व्रतस्य पारणार्थाय ब्राह्मणान् भोज-
येत् सुधीः ॥ क्षमापयेच्च शिरसा भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ ९७ ॥ गुरुपूजा ततः कार्या भोजनाच्छाद-

कर नदी पर जाय ॥ ९५ ॥ और वहाँ स्नान जप तथा प्रातःकाल के कर्म को करके गृह को जाय और विधिपूर्वक भगवान् की पूजा करे ॥ ९६ ॥ बुद्धिमान् को व्रत की समाप्ति के निमित्त ब्राह्मणों को भोजन और भक्ति करके शिर से नम्र हो क्षमा करना चाहिए

॥ ९७ ॥ पश्चात् भोजन वस्त्रादि से गुरु की पूजा करके चक्रपाणि भगवान् के सन्तुष्ट होने के निमित्त उनको दक्षिणा देवे ॥ ९८ ॥ और यत्नपूर्वक ब्राह्मणों को भूमिदान करे और जिन वस्तुओं का व्रत के आरम्भ में छोड़ने का नियम किया हो उन नियमों का ब्राह्मण के सम्मुख त्याग करैं ॥ ९९ ॥ और अपनी शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे और उन्हें भोजन करावे, हे राजन् ! स्वयं भी रात्रि में भोजन करना चाहिये ॥ १०० ॥ अयाचित व्रत में सुवर्ण के सहित बलवान् बैल को ब्राह्मण को दान करना चाहिये,

नादिभिः ॥ दक्षिणा गाश्च दातव्या तुष्ट्यर्थं चक्रपाणिनः ॥ ९८ ॥ भूयसी चैव दातव्या ब्राह्मणेभ्यः प्रयत्नतः ॥ नियमश्चैव सन्त्याज्यो ब्राह्मणाग्रे प्रयत्नतः ॥ ९९ ॥ कथयित्वा द्विजेभ्यस्तद्द्याच्छक्त्या च दक्षिणाम् ॥ नक्तभोजी नरो राजन् ब्राह्मणान् भोजयेच्छुभान् ॥ १०० ॥ अयाचिते बलीवर्दं सहिरण्यं प्रदापयेत् ॥ अमांसाशी नरो यस्तु प्रदद्देद्गां सदक्षिणाम् ॥ १०१ ॥ धात्रीस्नायी नरो दद्याद्दधि माक्षिकमेव च ॥ फलानां नियमे राजन् फलदानं समाचरेत् ॥ १०२ ॥ तैलस्थाने घृतं देयं

और जो मनुष्य निरामिष रहते हैं अर्थात् कभी मांस भोजन नहीं करते हैं उनको दक्षिणा सहित गोदान करना चाहिए ॥ १०१ ॥ हे राजन् ! अमला से स्नान रूप व्रत में मनुष्य को दधि और शहद का दान करना चाहिए, और जो मनुष्य फलों का त्याग किए हों उनको फल का दान करना चाहिए ॥ १०२ ॥ और हे राजन् ! तैल त्याग करने से घृत, घृत का त्याग करने से दूध और अन्न का

त्याग करने से साठी का चावल दान दिया जाता है ॥ १०३ ॥ हे राजन् ! पृथ्वी में शयन करने वाले को शय्या और रूईदार गद्दा आदि सामग्री सहित दान देना चाहिए, और पत्ता पर भोजन करनेवाले मनुष्य को घृत से भरा हुआ पात्र दान करना चाहिए ॥१०४॥ मौनव्रत करने वाले मनुष्य को दम्पति अर्थात् ब्राह्मण ब्राह्मणी को घृत संयुक्त भोजन कराना चाहिए ॥ १०५ ॥ बाल रखने वाले

घृतस्थाने पयः स्मृतम् ॥ धान्यानां नियमे राजन् दीयन्ते शालितण्डुलाः ॥ १०३ ॥ दद्याद् भूशयने शय्यां सतूलां सपरिच्छदाम् ॥ पत्रभोजी नरो राजन् भाजनं घृतसंयुतम् ॥ १०४ ॥ मौनी घण्टां तिलांश्चैव सहिरण्यं प्रदापयेत् ॥ दम्पत्योर्भोजनं देयं निःस्नेहं सर्पिषा युतम् ॥ १०५ ॥ धारणे तु स्वकेशानामादर्शं दापयेद्बुधः ॥ उपानहौ प्रदातव्ये उपानत्परिवर्जनात् ॥ १०६ ॥ लवणस्य च सन्त्यागे शर्करां च प्रदापयेत् । नित्यं दीपः प्रदेयस्तु विष्णोर्वा विबुधालये ॥ १०७ ॥ सदीपं सघृतं ताम्रं काञ्चनं वा दशायुतम् ॥ प्रदद्याद्विष्णुभक्ताय व्रतसम्पूर्तिहेतवे ॥ १०८ ॥ एकान्तरोपवासे तु

मनुष्य को दर्पण, जूता का त्याग करने वाले को एक जोड़ा जूता दान करना चाहिये ॥ १०६ ॥ लवण का त्याग करने वाले को शर्करा दान करना और विष्णु के मन्दिर में अथवा देवालय में प्रतिदिन दीपक जलाना चाहिए ॥ १०७ ॥ और व्रत की समाप्ति के निमित्त ताम्र अथवा सुवर्ण के पात्र में घृत और बत्ती रख के विष्णुभक्त ब्राह्मण को दान देना चाहिए ॥ १०८ ॥ एकान्त व्रत में आठ

कलश को वस्त्र और सुवर्ण से अलंकृत करके दान करे ॥ १०९ ॥ हे राजन् ! यदि यह सब न हो सके तो इनके अभाव में ब्राह्मण का वचन सब व्रतों के सिद्धि को देने वाला कहा जाता है ॥ ११० ॥ इस प्रकार ब्राह्मण को प्रणाम कर उनको विदा करे और पश्चात आप भी भोजन करे, जिन वस्तुओं को चातुर्मास में त्याग किया हो उन्हीं वस्तुओं की समाप्ति करनी चाहिए ॥ १११ ॥ हे राजन् ! जो

कुम्भानष्टौ प्रदापयेत् । सवस्त्रान् काञ्चनोपेतान् सर्वान् सालङ्कृताञ्छुभान् ॥ १०९ ॥ सर्वेषामप्यलाभे तु यथोक्तकरणं विना ॥ द्विजवाक्यं स्मृतं राजन् सम्पूर्णव्रतसिद्धिदम् ॥ ११० ॥ नत्वा विसर्जयेद्-विप्रांस्ततो भुञ्जीत च स्वयम् ॥ यत्त्यक्तं चतुरो मासान् समाप्तिं तस्य चाचरेत् ॥ १११ ॥ एवं य आचरेत्प्राज्ञः सोऽनन्तफलमाप्नुयात् ॥ अवसाने तु राजेन्द्र वासुदेवपुरं व्रजेत् ॥ ११२ ॥ यश्चाविघ्नं समाप्यैव चातुर्मास्यव्रतं नृप ॥ स भवेत्कृतकृत्यस्तु न पुनर्मानुषो भवेत् ॥ ११३ ॥ एतत् कृत्वा

बुद्धिमान् इस प्रकार आचार करते हैं वे अनन्त फल को पाते हैं और अन्तसमय में विष्णुलोक में जाते हैं ॥११२॥ हे राजन् ! जो इस प्रकार चातुर्मास व्रत को निर्विघ्नता से समाप्त करते हैं वे कृतकृत्य हो जाते हैं और फिर उन मनुष्यों को जन्म नहीं होता है, अर्थात् वे मुक्त हो जाते हैं ॥ ११३ ॥ हे राजन् ! इस प्रकार करने से व्रत समाप्त हो जाता है, और यदि व्रत भ्रष्ट हो जाय तो व्रत करने वाला

अन्धा, कोढ़ी हो जाता है ॥ ११४ ॥ तुमने मेरे से जो पूछा था सो सब मैंने तुमसे कहा, इस कथा के सुनने और पढ़ने से भी गोदान

महीपाल परिपूर्णं व्रतं भवेत् ॥ व्रतवैकल्यमासाद्य ह्यन्धः कुष्ठी प्रजायते ॥ ११४ ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं
यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ॥ पठनाच्छ्रवणाद्वापि भवेद्गोदानजं फलम् ॥ ११५ ॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे कार्तिकशुक्लप्रबोधिन्यैकादशीव्रतमाहात्म्यं सम्पूर्णम् ॥

करने का फल होता है ॥ ११५ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे कार्त्तिके शुक्लप्रबोधिन्यैकादशीव्रतमाहात्म्ये भाषाटीका सम्पूर्णा ॥ २४ ॥